ट्यूब लाइट से मकड़ी

यशोदा

दिन शनिवार, रात के आठ बजे थे। मैं तख़्त पर घुटने मोड़े बैठी थी। क्योंकि सुबह से ही मेरे हाथ में दर्द था, मैं हाथ को रह–रहकर झटका दे रही थी। गली में बच्चों के शोर का वॉल्यूम काफ़ी मध्यम था। नीचे गद्दे पर चाचा बैठे हुए बीड़ी पी रहे थे। चाचा दिखने में काफ़ी बुज़ुर्ग लगते हैं। वैसे बुज़ुर्ग दिखने की अब उनकी उम्र भी है। वो कुछ सोच–सोच कर बीड़ी के कश लगा रहे थे। मम्मी मज़े ले–लेकर खाना खा रही थीं, क्योंकि आज हमारे घर शलजम बने थे। शलजम मम्मी की फ़ेवरेट डिश है, लेकिन मेरी नहीं। पूरे कमरे में बीड़ी का धुआँ और शलजम की महक फैली हुई थी, और आसानी से बाहर नहीं निकल पा रही थी। वो इसलिए, कि हमारे कमरे में कोई ख़िड़की वग़ैरह नहीं है। और आजकल ठंड भी होने लगी है। इसलिए हम जल्दी ही पर्दा डाल लेते हैं। तभी अचानक ट्यूब लाइट लुप–झुप होने लगी और मैंने तख़्त पर से हाथ बढ़ाकर ट्यूब बंद करके बल्ब जला दिया। तभी चाचा बीड़ी को मसलते हुए बोले, "अरे बेटे, ट्यूब तो चालू कर"। उनके बोलने का स्टाइल कुछ ऐसा था कि ट्यूब बंद होने की वजह से ही भूचाल न आ जाए।

अरे, भूचाल से मुझे याद आया, जब शुरु में राहुल (राहुल मेरा छोटा भाई है। दिखने में दुबला, क़द में लम्बा, नाक–नक्शा तीखा और क्रिकेट में नंबर वन।) और मैंने ज़िद्द की थी, तो चाचा ने घर में हंगामा कर दिया था। "हाँ, अब ट्यूब लाइट लगेगी। फिर फ़्रिज आएगा। हम इतने लखपति नहीं हैं जो सब कुछ ख़रीद सकें। उतने ही पैर फैलाओ, बेटा, जितनी हमारी चादर है"।

"लेकिन चाचा, ट्यूब लाइट में इतना ख़र्चा नहीं है"।

"बेटा, कितना भी ख़र्चा हो, कम या ज़्यादा, हमारी इतनी गुंजाइश नहीं है"।

लेकिन शायद ट्यूब लाइट लगनी ही थी। और राहुल का दो सौ रुपया हफ़्ता मिलते ही राहुल ने ट्यूब लाइट लगवा ली। और आज ट्यूब लाइट के बंद होते ही चाचा कैसे बेचैन हो गए हैं।

मैंने कुछ सोच कर कहा, "चाचा, तुम तो ट्यूब लगवाना ही नहीं चाहते थे। तुम्हें तो टेबल लैंप की रोशनी अच्छी लगती है"। वो बोले, "बेटा, बल्ब की रोशनी अच्छी लगती है। लेकिन अब ट्यूब लाइट की आदत–सी हो गई है। इसके बंद होते ही सब कुछ धुंधलाने लगता है। और जब ये जलती है, तो ऐसा लगता है जैसे दिन निकला हुआ है। इसकी रोशनी सफ़ेद है न, इसलिए"। ये कहते–कहते चाचा खड़े हो गए और स्विच ऑन करके स्टार्टर को हिलाने लगे। ट्यूब लाइट फिर से लुप–झुप होने लगी। ये देखकर मम्मी बहुत ज़ोर से हँसते हुए बोलीं, "इन्हें देखो। जवानी में तो एक कील तक नहीं ठुकी, अब बुढ़ापे में बिजली का काम करने चले हैं"। मम्मी की ये बात मुझे नीम के पत्तों जैसी कड़वी लगी। अपने दुःखते हाथ को दबाते हुए मैं गद्दे पर उतरी और बोली, "तुम तो ज़रा–ज़रा सी बात पर चाचा को ताना मारती हो। कभी चुप नहीं रह सकतीं?" मम्मी गुस्से से मेरी तरफ़ मुड़ कर बोलीं, "हाँ, तू तो है ही पापा की चहेती। कभी अपनी माँ की तरफ़दारी करने की भी सोचा है?" मम्मी की बात का जवाब दिए बिना मैं चाचा को हटाते हुए स्टार्टर को हिलाने लगी।

इतने में मुझे अपनी पीठ के पीछे मकड़ी की आवाज़ सुनाई दी। चाचा उस पर आँखें निकालते हुए बोले, "अबे, मैंने तुझ से कहा था हमारी दूध की थैली ला दियो। ये सुनते ही तू ग़ायब हो गया"। वो बोला, "अरे चाचा, मैं ग़ायब नहीं हुआ था। मैं इमरजेंसी गया था"। ये सुनते ही मैंने फ़ौरन स्विच ऑफ़ करके मकड़ी की तरफ़ अपना रुख़ किया और बोली, "क्यों गया था इमरजेंसी?" वो बोला, "अरे वो कालू राशन वाला नहीं है? उसकी पोती को टू–व्हीलर वाला उड़ा के चला गया। उसके बेहिसाब ख़ून बहने लगा। मैंने सोचा जितने में मैं इसे अंदर ले जाऊँगा, इतने में तो इसका काफ़ी ख़ून बह जाएगा। इसलिए मैं फ़ौरन उसे इमरजेंसी ले गया। जो बाहर के दुकान वाले थे, उन्होंने अंदर आकर उसके घर में ख़बर कर दी"।
और वो बोला, "चाचा, मैं उसे अस्पताल ले तो गया, मगर मैं फंस गया। वो मुझे उसका, उसके पापा का, माँ का नाम पूछने लगे"।
मैं बोली, "फिर तू ने क्या कहा?"
वो बोला, "उस समय मुझे जो नाम याद आए, वो बताए"।
मैं बोली, "कौन–कौन से नाम बताए तू ने मकड़ी?"
"मैंने उसका नाम गुलाब बताया, माँ का नाम ताहिरा बताया। फिर वो बोले, 'बाप का

नाम क्या है?' मेरा तो साला दिमाग़ ही घूम गया। मुझे भाई का नाम याद आया और मैंने कह दिया, 'इसके बाप का नाम मो. यामिन है'। मुझे बोले, 'तू कौन है?' तो मैंने बताया मैं इसका मामा हूँ। फिर थोड़ी देर मैं वहाँ बैठा रहा। इतने में इसके परिवार से सब पहुँच गए और मैंने भइया कह दिया, कि जो मेरे दिमाग़ में आया था, वो बता दिया। पर्चा पढ़ लेना, उस में क्या नाम हैं। और भइया, मैं तो वहाँ से भागा। आकर मैंने बरमे से हाथ–मुँह धोए और कमीज़ बदली"। मैंने उसे ग़ौर से देखा। पानी की बूंदें अभी तक उसके चेहरे पर चमक रही थीं। फिर मेरी उसके चेहरे पर नज़र टिक गई। वो मुझे उस समय बहुत प्यारा लगा। पता नहीं वो कौन–से भाव थे जो उस वक़्त मेरे दिल में उसके लिए आए थे।

वैसे मकड़ी दिखने में उतना अच्छा नहीं जितने अच्छे उसके गुण हैं। इसका क़द छोटा है, बिलकुल सचिन तेन्दुलकर की तरह। रंग काला है, हाथ–पैर छोटे और जिस्म एक सीमित, गठा हुआ आकार है। उसकी आँखें छोटी हैं, नाक नाटी है, चेहरा गोल है, बाल यह हमेशा छोटे रखता है। आज से ये तकरीबन दस–ग्यारह साल पहले यहाँ पर आया था। तब मैं शायद दूसरी कक्षा में पढ़ती थी और इसके कारख़ाने के आगे गिट्टे खेलती थी। वहाँ एक बड़ा–सा पत्थर बिछा रहता था, जिस पर गिट्टे उठाने में आसानी रहती थी। वैसे ये पत्थर आज भी वहाँ मौजूद है।

इसके कारख़ाने में विज़िटिंग कार्ड के डिब्बे बनते हैं। वैसे इस कारख़ाने के मालिक का नाम मो. यामिन है, लेकिन सब इन्हें भाई ही कहते हैं। इन्होंने ये झुग्गी मेरे दादा जी से आठ हज़ार में ख़रीदी थी। मकड़ी जब शुरु में यहाँ आया था तो रातों को उठ–उठ कर रोता था, "ऐ माँगे, ऐ माँगे!" तब मुझे इस पर बहुत तरस आता था। तब ये लगभग मेरी ही उम्र का रहा होगा, या मुझ से थोड़ा–सा बड़ा। शुरु–शुरु में ये कारख़ाने में लैट्रिन कर दिया करता था। तब भाई उसे बहुत मारते थे। पहले तो ये सिर्फ़ चाय–पानी का ही काम करता था, और कोने में उदास बैठा रहता था। ये देख कर सारे मोहल्ले के लोगों को इससे हमदर्दी हो गई, और क्योंकि ये "माँगे–माँगे" करके रोता था, तो इसी पर इसका नाम पड़ गया, मकड़ी। वैसे ये ज़िला कटिहार (बिहार) का रहने वाला है। घर में इसकी माँ है, बहन है और अपने घर की खेती–बाड़ी है। वहाँ ये खेती–बाड़ी में ध्यान नहीं देता था, इसलिए इसके मामू इसे दिल्ली ले आए। दिल्ली के बाद तो ये

ऐसा दिल्ली से चिपका कि अब तक दिल्ली से चिपका हुआ है। सब इससे पूछते हैं, "क्या तुझे अपने घर की याद नहीं आती?" तब ये कहता है, "मेरा घर तो अब यही गली है। इसे छोड़कर मैं कहीं नहीं जाऊँगा"। जब कोई इसके अब्बू के बारे में पूछता है, तो ये कहता है, "जब मैं छोटा था, तब ही गुज़र गए"।

जब मुझे इससे कोई भी काम कराना होता है, तो मैं इससे बड़े प्यार से कहती हूँ, "भाई मो. क़ासिम, इधर आओ"। ये फ़ौरन आ जाता है, और दाँत तो ऐसे दिखाता जैसे इसे मैंने कोई क़ीमती तोहफ़ा दे दिया है।

अब तो ये कारख़ाने का राजा है, क्योंकि भाई के बाद यही कारख़ाने को देखता है। इसने भाई का सारा काम अपने हाथों में ले लिया है। भाई के घर में इसकी वैसे ही केयर की जाती है जैसे किसी सदस्य की। भाई के घर में सब इसे छुआरा कहते हैं। क्योंकि ये काला–सा, छोटा–सा लड़का छुआरे जैसा दिखता है।

अभी कुछ साल पहले की बात है। भाई के घर में कोई प्रॉब्लम हो गई थी और भाई कारख़ाने में ध्यान नहीं दे पाते थे। तब इसने कारख़ाने के साथ–साथ मार्किटिंग भी संभाली। वो चाहता तो घपला भी कर सकता था, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। अपने मालिक की परेशानी को अपनी परेशानी समझा। तब से भाई इसे बहुत चाहते हैं। इसका स्वभाव भी बहुत नरम है, और ये ज़्यादातर हँसता रहता है। जब मैं कहीं घूमने जाती हूँ तो ये बड़े रौब से पूछता है, "ऐ नन्हीं, कहाँ जा रही है?" तब मुझे बहुत गुस्सा आता और मैं इसे डाँट देती हूँ। फिर अगले ही पल इससे बोलने लगती हूँ और इससे कहती हूँ, "तुझे इतने साल हो गए दिल्ली में रहते हुए, लेकिन तेरी भाषा नहीं सुधरी। कोई बाहर का इंसान सुनेगा तो समझ ही नहीं पाएगा कि तू क्या कह रहा है"। तब ये मुझे कुछ बोले बिना ही मेरी बातों को हँसी में उड़ाता हुआ निकल जाता है।

अब तो ये भाई के साथ पूरी गली का भी चहेता है। जब तक ये कारख़ाने में रहता है, तब तक कारख़ाने में रौनक–सी बनी रहती है, क्योंकि कोई न कोई इसके साथ बैठा बातों में लगा रहता है। बच्चे कारख़ाने के आगे नाचते–कूदते रहते हैं। अब तो ऐसा लगता है कि भाई से मकड़ी की पहचान नहीं, बल्कि मकड़ी से भाई की पहचान है।

एक मोची

लख्मी चन्द कोहली

ये कहानी है एक ऐसे बच्चे की जिसका नाम जितेन्दर है, जो अपनी पाँच साल की उम्र में ही मोची बना और अभी तक मोची बन कर अपना जीवन बिता रहा है। अब उसकी उम्र लगभग पंद्रह साल होगी।

गुरुवार का दिन था। मैं नहा कर अपने कमरे के बाहर बैठा नाख़ून काट रहा था। इतने में मेरी मम्मी ने कहा, "सोनू, अगर कोई मोची आए तो मुझे बता देना"। तो –
मैंने कहा: ठीक है।

और मैं अपने नाख़ून काटते–काटते बाहर की तरफ़ को चला गया और वहाँ पर खड़ा होकर मोची को देखता रहा। इतने में मुझे सामने से एक मोची आता दिखाई दिया। वो हमारी गली की तरफ़ ही आ रहा था। जैसे ही वो मेरी तरफ़ आया, मैंने उसके गले में अपना हाथ डाला और उसे अपने घर की तरफ़ लेकर चल दिया। वो मुझे ऐसे देख रहा था जैसे मानो मैं कोई पागल हूँ। वो मुझे देख कर हँस रहा था। फिर –
मैंने उस से कहा: यार, मेरी एक चप्पल है, जो बरसों से टूटी पड़ी है। आज तक उसे किसी ने ठीक नहीं करवाया। आज तुझे वो चप्पल ठीक करनी है। आज तेरा इम्तहान है। अगर तू ने वो चप्पल ठीक कर दी तो मैं तुझे मुँह–माँगी रक़म दूँगा।
(यह बात सुनकर शायद उसे पूरा यक़ीन हो गया था कि ये लड़का पूरा पागल है, क्योंकि वो अब मुझे देखकर कुछ ज़्यादा ही हँस रहा था।) फिर –
मैंने उस से कहा: अबे, हँस क्यों रहा है? बता ठीक करेगा या नहीं? और पैसे कितने लेगा?
मोची: हाँ, कर दूँगा। और पैसे दो रुपए लूँगा।
मैंने कहा: ठीक है। मगर एकदम ठीक! कहीं तेरे जाते ही टूट जाए तो!
वो फिर से हँसने लगा। वो इतना हँसमुख था कि मैंने सोचा इससे बात करनी चाहिए। (वो दिखने में पतला–सा और साँवला था। एक गाना वो बार–बार गा रहा था और वो

था "डिंग–डाँग", और वो बहुत मस्त लग रहा था। ऐसा लग रहा था कि वो आज बहुत खुश है।) फिर मैंने उस से बात करनी चाही।

मैंने कहा: यार, आज तू बड़ा खुश लग रहा है। तुझ से एक बात पूछूँ?
मोची: हाँ भाई, पूछो।
मैंने कहा: तेरा नाम क्या है?
मोची: भाई, मेरा नाम जितेन्दर है।
मैंने कहा: एक बात बता, तेरी उम्र क्या है?
मोची: मेरी उम्र पंद्रह साल है।
मैंने कहा: तू ये काम कब से कर रहा है?
मोची: भाई, मैं ये काम दस साल से कर रहा हूँ।
मैंने कहा: दस साल से! एक बात बता, तुझे झूठ बोलने के लिए मैं ही मिला हूँ? अभी तू ने कहा कि तेरी उम्र पंद्रह साल है। यानी कि तू पाँच साल की उम्र से ही मोची का काम कर रहा है? तुझ से उस उम्र में ये पेटी उठती थी?
मोची: भाई, मैं पहले पॉलिश करता था, तो मैं हल्की पेटी उठाता था।
मैंने कहा: तू ने पढ़ाई कहाँ तक की है?
मोची: मैंने पढ़ाई पाँचवीं क्लास तक की है। मैं दोपहर बारह बजे तक मोची का काम करता था, और फिर उसके बाद पढ़ने जाता था।
मैंने कहा: तू कहाँ पर रहता है, और तेरे घर में कौन–कौन है?
मोची: भाई, मैं खानपूर में रहता हूँ, और मेरे घर–वाले गाँव में रहते हैं। मैं यहाँ पर अपने चाचा के साथ रहता हूँ।
मैंने कहा: क्या तू ये काम अपनी मर्ज़ी से करता है, या फिर तेरे चाचा तुझ से ज़बरदस्ती करवाते हैं?
मोची: नहीं भाई, मैं ये काम अपनी मर्ज़ी से करता हूँ।

बातों ही बातों में उसने चप्पल ठीक कर दी थी। मगर वहाँ पर बैठे–बैठे उस के पास और भी काम आ गया था, जो कि कम से कम दस–बारह रुपए का होगा।
ये देखकर मैंने कहा: ओए उस्ताद, देखा मेरे पास बैठते ही तेरे पास कितना काम आ गया। भाई, अब मैं नहीं जानता, मुझे तो अब अपना हिस्सा चाहिए।

(ये सुनकर वो हँसने लगा और मेरी तरफ़ देखने लगा।)

मोची: ले लेना भाई।

तो मैंने कहा: नहीं यार, मैं मज़ाक कर रहा था! चल ठीक है, तुझ पर और काम आ गया। तुझ से अब और बात हो जाएगी। फिर मैंने पूछा, "तेरे घर में कौन–कौन है?"

मोची: भाई, मेरे घर में माँ और पापा, और एक बड़ा भाई है।

मैंने कहा: क्या तेरे घर में पता है कि तू मोची का काम करता है?

मोची: हाँ भाई, पता है।

मैंने कहा: क्या उन्होंने तुझे मना नहीं किया?

मोची: हाँ भाई, पहले मना किया था, मगर अब तो कुछ नहीं कहते।

मैंने कहा: तू पूरे दिन काम करता है। क्या तेरा मन नहीं करता और बच्चों की तरह खेलने–कूदने का?

मोची: हाँ भाई, मैं खेलता तो हूँ। शाम को काम से जब मैं घर जाता हूँ, तब अपने दोस्तों के साथ खेलता हूँ।

मैंने कहा: क्या तू थकता नहीं? तू पूरे दिन काम करता है।

मोची: हाँ, थक तो जाता हूँ। मगर जब खेलने का मन करता है तो मैं खेलने चला जाता हूँ।

मैंने कहा: तू पूरे दिन में कितना कमा लेता है?

मोची: मैं भाई लगभग पूरे दिन में चालीस–पचास रुपए कमा लेता हूँ।

मैंने कहा: अच्छा, तो तू पूरी कमाई किसे देता है? क्या अपने चाचा को?

मोची: नहीं, मैं अपनी सारी कमाई अपने पास रखता हूँ। कभी–कभी देता हूँ। नहीं तो अपने ही पास रखता हूँ।

मैंने कहा: तू फिर उसका करता क्या है? उस पैसे को जोड़ता है, या फिर ख़र्च कर देता है?

मोची: भाई, मैं उसे ख़र्च कर देता हूँ। कुछ खा लेता हूँ, और कुछ अपने चाचा को दे देता हूँ।

मैंने कहा: अच्छा, एक बात बता। ये पेटी तेरी ख़ुद की है या फिर किराए की?

मोची: नहीं भाई, ये मैं पहले किराए पर चलाता था। मगर अब ये मैंने दो सौ रुपए में ख़रीद ली।

मैंने कहा: चल भाई, तू अपनी ज़िन्दगी में हमेशा ख़ुश रहना।

ये मैंने उस से इसलिए कहा कि अब वो जा रहा था। उसका काम पूरा हो चुका था। जाते–जाते वो मुझे "अच्छा भाई" कहकर गया। उसको जाते देख मैं उसे पीछे से देख रहा था और यही सोच रहा था कि इतनी छोटी–सी उम्र में ये इतनी मेहनत कर रहा है। न जाने इसका आने वाला कल कैसा होगा, और न जाने ये अपनी आने वाली ज़िन्दगी कैसे बिताएगा। और न जाने ये फिर कभी मुझे मिलेगा भी, या नहीं। देखते–ही–देखते वो मेरी आँखों से ओझल हो गया।

एक भेंट

शमशेर अली

तीन साल पहले की बात है। 1999 में जब इलेक्शन हुआ था, उसमें जो नेता जीते, उन्होंने पूरी बस्ती में नल लगवाए। हमारे मोहल्ले में भी एक नल लगा। तब से हमें पानी बाहर से लाने की ज़रूरत नहीं है। ये नल दिन में दो बार आता है। सुबह तीन घण्टे, पाँच बजे से आठ बजे तक (पूरे आठ बजे चला जाता है) और शाम को भी तीन घण्टे, बिलकुल सेम टाइम। कभी–कभी पानी की हड़ताल भी होती है। तो ये नल आते भी नही हैं। और किसी को भी पानी नहीं मिलता है। हमारा ये नल चौदह–पन्द्रह घरों में पानी भरता है। इस नल की ख़ासियत है कि ये हमारी मुश्किलों को पहचानता है। यह त्योहारों में पानी देता है। ख़ासकर उन त्योहारों में, जिनमें हमें पानी की ज़्यादा ज़रूरत होती है। ईद वाले दिन नल बहुत जल्दी आ जाएगा, और नौ बजे जाएगा। होली में दोपहर में नल आएगा, एक डेढ़ घण्टे नहाने के लिए। दिवाली में शाम के टाइम चार बजे ही नल आ जाएगा।

नल लगने से हमारी बहुत–सी मुश्किलें आसान हो गईं हैं। नहीं तो हमें बाहर से पानी लाना पड़ता था, दो–दो घण्टे पानी की लाइन में खड़े होकर। ये नल हमें भेंट दिया गया है। ये हम सब के लिए एक उपहार है। इसे सब मिल–जुल कर अपनाते हैं। एक साँझा की तरह हम इसका इस्तेमाल करते हैं। जिन चौदह–पंद्रह घरों का ये पानी भरता है, ये नल उन सबके परिवारों में मायने रखता है। ये हमारे परिवारों का एक सदस्य

है। चाहे बोलकर, या लिखकर, या हमारे मुँह पर इसके चर्चे न हो, मगर कहीं न कहीं इस नल के लिए सब के दिलों में प्यार है। इस नल के आने से एक अलग तरह की आज़ादी है। ख़ासकर बच्चों के लिए, जिन्हें पानी के लिए काफ़ी देर तक लाइन में खड़ा रहना पड़ता था, पीने के लिए नल की लाइन में, और काम करने के लिए और नहाने के लिए बरमे की लाइन में।

जोड़ी

धिरेन्द्र प्रताप सिंह

वाह बुढ़ापे, तेरा भी जवाब नहीं!
पर कैसे जवाब नहीं?
वो ऐसे –
सुबह के पाँच बज रहे थे। मैं कपड़े धो रहा था। मम्मी ऊपर पानी भर रही थीं। सामने दो हँसों का जोड़ा रहता है, जिन्हें हम सब बाबा और अम्माजी के नाम से जानते हैं। दोनों सुबह चार बजे वैसे उठ जाते हैं। और दोनों में तू–तू, मैं–मैं होने लग जाती है। बाबा उठ कर चाय बनाते हैं, और अम्मा झाड़ू–पोंछा करती हैं। अम्मा सफ़ाई ज़्यादा रखती हैं। उम्र में बाबा सत्तासी साल के, अम्मा अस्सी साल की हैं। मगर दोनों हैं कड़क और अक्कड़। पर शायद सब के लिए नहीं। हाँ, तो मैं कह रहा था –

सुबह के पाँच बज रहे थे। बाबा उठे, चाय का पानी चढ़ाया और चाय बनाई। अम्मा भी उठ गईं थीं शायद। चाय बनकर तैयार हुई। बाबा ने आवाज़ मारी, "रानी, ओ मेरी रानी! उठ जा, चाय बन गई। अगर ठंडी हो गई, तो हो जाएगी पानी"।
अम्मा ने आवाज़ लगाई, "उठ तो गई"।
बाबा ने पूछा, "चाय प्याले में पियेगी, या गिलास में?"
अम्मा ने आवाज़ लगाई, "प्याले में"।
दोनों ने आराम से बैठ कर चाय पी होगी।

चाय पीने के बाद अम्मा अपने झाड़ू–पोंछे में लग गईं। बाबा टहलने के लिए पार्क में... माफ़ करना, पार्क तो है ही नहीं... गली में टहलने लगे। थोड़ा टहलने के बाद

बाबा जब गेट खोलकर अंदर जाने लगे तो अम्मा ने धक्के मार कर उन्हें बाहर कर दिया और कहने लगीं, "पैर धो कर घर में आ"। और धीरे से ये भी कह गईं, "बाहर लड़कियाँ छेड़ने पहुँच जाता है सुबह–सुबह"। बाबा ने कहा, "ज़्यादा बड़–बड़ मत कर"। अम्मा ने बात कानों से टाल दी, क्योंकि अम्मा को ऊँचा सुनता है।

बाबा ने कहा, "बाल्टी में पानी दे दे, चप्पल धो लूँगा"। अम्मा ने कहा, "आकर खुद ले ले"। अम्मा शायद भूल गईं कि गंदे पैर होने के कारण बाबा को बाहर किया है।

मेरे दोनों कान वहीं थे। शायद बाबा अंदर घुस गए और भूल गए कि चप्पल नहीं उतारी। अम्मा ने बाबा के एक–दो झाड़ू मारी, लगता है। बाबा की आवाज़ आ रही थी, "मार क्यों रही है?" अम्मा ने कहा, "मैंने कहा था न, अन्दर मत आना"।

इतने में वॉशिंग मशीन का अलार्म बज उठा।

अनजानी सड़क

किरण वर्मा

बात तब की है जब मैं आठ साल की थी और तीसरी कक्षा में पढ़ती थी। एक रात मेरे पापा मेरे लिए नई पायल ख़रीद कर लाए। वो पायल बहुत अच्छी थी। उस में बहुत सारे घुँघरू थे। मैंने वो पायल पहनी ही थी कि पापा कहने लगे, "तुम ये पायल नहीं पहनोगी"। मैंने कहा, "क्यों पापा? क्या ये पायल किसी और की है?" पापा ने कहा, "नहीं, ये पायल तुम्हारी है। लेकिन तुम इसे नहीं पहनोगी, क्योंकि सारी पायल खो देती हो"। तभी मैंने तपाक से कहा, "अब कभी नहीं खोऊँगी"। तो पापा ने कहा, "नहीं, मैं तुम्हारे लिए बहुत–सी पायल ला चुका हूँ"।

इतना सुनते ही मैं रोने लगी और रोते–रोते अपनी दुकान पर चली गई। फिर पापा भी मेरे पीछे दुकान पर आए और मुझे गोद में उठाकर वो पायल पहनाई जो मैं गुस्से से घर में उतार आई थी। फिर मैं वो पायल पहन कर सुबह स्कूल गई और वहाँ सभी ने मेरी पायल देखी और सभी को वो पायल अच्छी लगी।

लंच टाइम में हम सब बाहर एक छोटी–सी दीवार पर बैठकर खाना खा रहे थे। तभी वहाँ एक आन्टी आईं और पायल देखने लगीं। उन्होंने कहा, "तुम्हारी पायल तो बहुत अच्छी है"। मैंने कहा, "मेरे पापा कल रात को ही लेकर आए हैं"। थोड़ी देर बाद लंच टाइम ख़त्म हुआ और हमारे स्कूल का गेट बंद हो गया। लेकिन हम वहीं ग्राऊँड में खेलने लगे। थोड़ी देर बाद वो आन्टी दोबारा मेरे पास आईं और कहने लगीं, "तुम्हारे स्कूल का गेट बंद हो गया है, मैं बाहर कैसे जाऊँ?" मैंने कहा, "आन्टी, आप हमारे चौकीदार से बोलें, वो आपको भेज देगा"। लेकिन फिर उन्होंने कहा, "दीवार में एक गड्ढा है। तुम मुझे वहाँ से निकाल दो"। मैंने कहा, "चलो"।

मैं उनके साथ चली गई और वहाँ से निकलने के बाद आन्टी ने कहा, "मैं तुझे तेरे घर पहुँचा दूँ?" मैंने कहा, "मेरा घर यहाँ से नहीं, गेट के पास से आता है"। वो बोलीं, "ठीक है, तुम मेरे घर चलो। मैं तुम्हें थोड़ी देर बाद स्कूल छोड़ दूँगी"। मैंने कहा, "चलो"। आन्टी ने कहा, "तुम अपनी आँखे बंद कर लो और जब तक मैं न कहूँ आँखें मत खोलना"। मैंने अपनी आँखें बंद कीं और पता नहीं वो आन्टी मुझे कहाँ ले गईं। फिर उन्होंने कहा, "तुम अपनी आँखें खोलो"। मैंने अपनी आँखें खोलीं तो देखा कि एक नई जगह पर हूँ। मैंने कहा, "यहाँ तो कोई नहीं"। फिर आगे चलकर आन्टी ने मुझे आईसक्रीम दिलवाई और पचास पैसे दिए। मुझे बड़ा अच्छा लगा। मैंने अपने मन में कहा, "ये आन्टी तो बहुत अच्छी हैं"।

थोड़ी देर बाद उन्होंने मेरी पायल उतार ली। तभी मैंने कहा, "आन्टी, इन्हें मत उतारो। ये खो गईं तो मेरे पापा मुझे बहुत मारेंगे"। आन्टी ने कहा, "तुम यहीं ठहरो, मैं अपनी लड़की को यह पायल दिखा दूँ, क्योंकि मैं भी उसके लिए ऐसी ही पायल ख़रीदूँगी"। मैंने कहा, "ठीक है। जल्दी दिखा दो, मुझे वापस स्कूल में भी जाना है। वरना मेरी मैडम मेरा नाम काट देगी"। उन्होंने कहा, "मैं अभी आती हूँ"। आन्टी चली गईं और मैं वहाँ बैठी रही। सभी आते–जाते लोग मुझे देख रहे थे। मुझे बहुत डर लग रहा था, कि न जाने मैं कहाँ हूँ और वो आन्टी भी मेरी पायल लेकर चली गईं और अभी तक नहीं आईं। फिर मैं वहाँ से खड़ी होकर इधर–उधर देखने लगी, कि आख़िर वो आन्टी कहाँ गईं।

अब मैं रोने लगी। रोते–रोते कभी इधर जाती तो, कभी उधर। आते–जाते लोग मुझे देख रहे थे। एक दुकान वाले अंकल ने मुझे रोक कर कहा, "बेटी, रो क्यों रही हो?" मैंने कहा, "अंकल, मेरा घर खो गया है। मुझे मेरे घर पहुँचा दो"। अंकल ने कहा, "बेटे, तुम यहाँ बैठ जाओ"। मैं वहाँ बैठ गई। शाम को उनका बेटा वहाँ आया और उन्होंने मुझ से मेरा नाम पूछा। मैंने उन भैया को अपना नाम बताया। फिर भैया ने मुझ से मेरे घर का पता पूछा, और फिर कहने लगे, "तुम यहाँ कैसे आई?" मैंने उन्हें सारी बात बताई। फिर वो भइया वहाँ से चले गए और रात को वापस आए।

उस समय मैं वहाँ दुकान में सो रही थी। भैया ने मुझे गोद में उठाया और स्कूटर पर बैठ कर मेरे घर जाने लगे। थोड़ी देर बाद हम घर पहुँच गए। भैया ने कहा, "किरण, तुम्हारा घर आ गया"। मैं स्कूटर से उतरकर अपने घर की तरफ़ भागी। घर में देखा सभी रो रहे थे। मम्मी और भाई मेरे पापा को चुप करवा रहे थे। मैं पापा के सामने जा खड़ी हुई। पापा ने मुझे देखते ही गले से लगा लिया, फिर उन भैया को बिठाया। अचानक पापा उन भैया के पैर छूने लगे। वो भैया तपाक से खड़े हो गए और कहने लगे, "ये क्या कर रहे हो अंकल जी?" पापा ने कहा, "तुम कहाँ से आए हो बेटे?" भैया ने कहा, "मैं खानपुर से आया हूँ। वो तो शुक्र है अंकल, कि आपकी लड़की को घर का पता मालूम था, वरना आज आप अपनी लड़की को खो चुके होते"।

उस समय तो हम सो गए। पापा सुबह चार बजे उठ गए। मैं भी पापा के साथ उठ गई। पापा चाय बना रहे थे। उन्होंने मुझ से सारी बात पूछी और फिर गले से लगा लिया। मैंने पापा से कहा, "मैं स्कूल नहीं जाऊँगी"। पापा ने कहा, "तुम स्कूल क्यों नहीं जाओगी?" मैंने कहा, "पापा, अगर वो आन्टी दोबारा मुझे ले गई तो?" पापा ने कहा, "किसी अनजान आदमी के साथ कभी कहीं नहीं जाना चाहिए, वो कितना भी कहता रहे"। आज भी गली में सब मुझे चिढ़ाते हैं, "हम तेरे जैसे नहीं हैं, जो कि पचास पैसे में किसी को अपनी पायल देकर आ जाएँ!"

मुझे वो चेहरा तो याद नहीं, लेकिन वो अनजानी सड़क आज भी अच्छी तरह याद है।

अमजद की शादी

अज़रा तबस्सुम

एक लड़का था अमजद (नाम बदला है) नाम का। वो अट्ठाइस साल का था। उसके माँ–बाप थे तो, पर बहुत ज़ईफ़ हो चुके थे। इसलिए उसके भाई–बहनों की ज़िम्मेदारी उस पर थी। अमजद की दो बड़ी बहनों की शादी हो चुकी थी। उस से छोटे उसके तीन भाई–बहन और थे। यानी कि वो छः बहन–भाई थे। अमजद मोटर कंपनी का मैनेजर था। इसलिए उसकी तनख़्वाह पाँच हज़ार थी। उन पैसों से घर का, और बच्चों की पढ़ाई का ख़र्चा चलाता था। माँ–बाप फिर भी उस से हर वक़्त अपनी पान–बीड़ी आदि के लिए पैसे माँगते थे।

अमजद के सभी दोस्तों की शादी हो चुकी थी। और वो एक–दो बच्चों के बाप भी बन चुके थे। अमजद जब भी अपने दोस्तों को उनकी बीवियों के साथ घूमते देखता तो सोचता, "जल्दी से मेरी भी शादी हो चुकी होती तो मैं भी अपनी बीवी के साथ घूमता। उसको अपने साथ पार्टियों में लेकर जाता। शायद मेरी शादी कभी नहीं होगी। मेरी ज़िन्दगी अपने भाई–बहनों को पालने में ही गुज़र जाएगी"। घर से काम, काम से घर, यही उसका रूटीन था। जब घर में छोटे बहन–भाई उस से हँस कर बोलते, तो वो भी उनके साथ बच्चा बन जाता। जिससे महसूस होता जैसे उसे किसी बात का ग़म ही नहीं है। ऐसे ही तीन–चार साल बीते। इसी बीच अमजद के अब्बू की मौत हो गई। उसकी अम्मी इद्दत में बैठ गईं। उसी बीच उसकी छोटी बहन का रिश्ता आया। अमजद ने पूछ–ताछ करके, लड़का देखकर बात पक्की कर दी। अब अमजद मसरूफ़ था अपनी बहन की शादी की तैयारियों में।

एक बार वो बाज़ार से कुछ सामान लेकर आ रहा था। उसका एक दोस्त उसे रास्ते में मिला। सामान हाथ में देखकर बोला, "शादी कर रहा है क्या, जो इतना सारा सामान लेकर जा रहा है?" अमजद से मुस्कुराते हुए मज़ाक में कहा, "अच्छा यार, हमें बुलाओगे या नहीं। भाभी जी कहाँ की रहने वाली हैं? क्या नाम है?" अमजद ने मुस्कुराते हुए होंठों को समेटा और बोला, "मेरी बहन की शादी है"। "क्या तेरी नहीं? यार मैं तो सोच रहा था कि तेरी है। यार, तू तो सबसे पीछे रह गया। तू शादी भी करेगा, या कुँवारा ही मरेगा?"

अमजद ने बात टाली और अपने घर थोड़ा मायूस–सा पहुँचा। करता भी क्या, आख़िर उसके अलावा घर में है भी कौन जो घर को संभाले।

अम्मी की इद्दत ख़त्म हो गई तो शादी में एक महीना था। अमजद ने कुछ पैसे जमा किए हुए थे। कुछ उधार लेकर उसने सारा इंतज़ाम कर लिया। उसकी बड़ी बहनें भी घर आई हुईं थीं। शादी का दिन आया। आज वो भागा–दौड़ी में लगा हुआ था। उसके दिमाग़ में था कि सब कुछ ठीक–ठाक हो जाए। कहीं कोई कमी न रह जाए। वो था तो ख़ूबसूरत, पर थोड़ा कमज़ोर था। रंग साँवला, आँखें बड़ी, मूछें घनी, क़द पाँच फुट, दुबला–पतला। वो खाने की मेज़ पर खाना लगा रहा था।

उस ने दो औरतों को बातें करते सुना। वो उसके पीछे ही बैठी थीं। उनमें से एक औरत कह रही थी, "यह लड़का कौन है?"
दूसरी औरत, "दुल्हन का भाई है"।
"लड़का तो अच्छा है। उम्र कितनी होगी?"
"यही कोई अट्ठाइस–तीस साल।"
"उम्र निकली जा रही है, शादी क्यों नहीं करता?"
"माँ करवाएगी, तभी तो करेगा। बच्चा बहुत सीधा–साधा है"।
ये बात सुनकर वह अपने आप को बूढ़ा महसूस कर रहा था। उसके कानों में उनके अलफ़ाज़ गूँज रहे थे, "उम्र निकली जा रही है"। उसका दिल बुझा–बुझा सा हो गया। वो इस बात को ना चाहकर भी महसूस कर रहा था।
"दुनिया के लोग ऐसे क्यों हैं? वो क्यों बताना चाहते हैं किसी को क्या करना चाहिए?"
अमजद ने इन्हीं सब बातों के बीच गुज़रते हुए अपनी बहन को विदा किया।

सब की सोच:

नीलोफ़र

मुझे इस कहानी में सबसे अहम खाने की मेज़ पर बैठी वो दो औरतें और उन की बातें लगीं। अगर वो न बोलतीं, और अमजद उनकी बातें न सुनता, तो सब कुछ अलग होता।

महरुन्निसा

ये लेख सुनकर मुझे ऐसा लगा जैसे मैंने ये लेख कहीं सुन रखा है। पता नहीं किससे? अमजद अभी अपनी परेशानियों में घिरा हुआ है। जब वो सब ख़त्म हो जाएँगीं तो अमजद शादी कर लेगा। ज़माना अगर उसे चैन से जीने नहीं देगा, तो शायद वो हार भी मान ले। अभी उसकी दो बहनें और बैठी हैं, जिनकी शादी तक की उम्र आने में टाइम होगा। अमजद की अम्मी नहीं चाहतीं कि उसकी शादी हो जाए। वो जानती हैं कि कुछ बहुएँ ऐसी भी होती हैं जो बेटे को माँ से अलग कर देती हैं। शायद वो ये भी सोचतीं हों कि इसकी इतनी उम्र हो चुकी है, अब इसके लिए लड़की कहाँ देखूँ। हो सकता है अमजद शादी ही ना करे। क्योंकि उन औरतों की बात सुनकर वो अपने आप को बूढ़ा मानने लगा।

मासूमा अंसारी

अमजद एक ऐसा इंसान है जिस पर अपने घर की वो तमाम ज़िम्मेदारियाँ हैं जो एक बड़े बेटे की होती हैं। इन्हीं ज़िम्मेदारियों में दब कर उसकी कोई अपनी ज़ाती ज़िन्दगी नहीं है। उसे इस बात का अहसास तब भी होता है, जब वो अपने दोस्तों को बीवी–बच्चों के साथ कहीं आता–जाता देखता है। इससे वो अपने खालीपन को महसूस करता है। वो ये क्यों नहीं सोचता कि लोगों का तो काम ही होता है बातें बनाना। जब शादी हो जाएगी, तो यही औरतें कहेंगी, "कैसा बैटा है? अपनी बीवी के आगे माँ की नहीं सुनता"। अमजद को अपनी ज़िम्मेदारियों का अच्छी तरह से अहसास है। पर लोगों की बातें उसकी अच्छी–भली चलती हुई ज़िन्दगी को हिला देती हैं। वो ये क्यों सोचता है कि उसकी शादी नहीं हो रही। वो ये क्यों नहीं सोचता कि शादी के बाद उस पर ज़िम्मेदारियाँ और बढ़ जाएँगी। दूसरी बात ये, कि अगर शादी होनी होगी तो हो जाएगी। नहीं होनी, तो लाख कोशिशों के बाद भी नहीं होगी।

अज़रा तबस्सुम

1. अमजद जब काम पर चला जाता है तो वहाँ वो अपनी घर की सोच को अपने से कितना दूर कर पाता है?

2. अमजद से उसके परिवार वालों का रिश्ता क्या है? जो दिख रहा है वो, या कुछ और?

3. अमजद की जगह अगर कोई लड़की होती, तो सोच में कितना अंतर आता?

4. मैं ये लिखते समय चाह रही थी कि मैं इसमें अमजद की फ़ीलिंग, उसकी पहचान, उसकी ख़्वाहिशें उभारूँ। लिख तो रही थी यही सोचते हुए, पर लिखते समय कुछ–कुछ मुझ से खो गया। जिसकी वजह से यह लेख अब मुझे कुछ बँधा–बँधा सा लग रहा है। नीलोफ़र ने कहा कि इस लेख को आगे नहीं बढ़ाया जाए। मुझे लगता है कि मैं इस बात से सहमत हूँ। क्योंकि आगे लिखने से वही आ सकता है – शादी, शादी के बाद की ज़िन्दगी। पर अगर हम उसकी पिछली ज़िन्दगी सोचें, तो क्या तब भी वही होगा?

5. माँ की नज़र में अमजद क्या है, और दूसरों की नज़र में क्या है?

6. हम आस–पास की ऐसी ही और फीलिंग्ज़ को लिखें तो शायद हम इसे और समझ पाएँगे।

7. अगर अमजद इन सब बातों को इग्नोर करे और मस्त रहे, तो लेख कहाँ पहुँचेगा?